कृषि अवशेषों (पराली) का दहन – समाधान

समस्या क्या है?

- भारत में खेती का कुल रकबा 141.4 मिलियन हेक्टेयर है। देश में फसल कटने के बाद खेत के अंदर और उसके बाहर बहुत भारी मात्रा में कृषि अवशेष (पराली) उत्पन्न होते हैं। भारत में हर साल करीब 60 करोड़ टन कृषि अवशेष निकलते हैं। इसमें उत्तर प्रदेश की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा (कुल बायोमास का 17.9 प्रतिशत) है। इसके बाद महाराष्ट्र (10.52 प्रतिशत), पंजाब (8.15 प्रतिशत) और गुजरात (6.4) का स्थान है।

- एक अनुमान के मुताबिक भारत में हर साल 14 करोड़ टन पराली उत्पन्न होती है। इन अवशेषों को जलाने से खरीफ फसल की कटाई के दौरान सिंधु-गंगा के मैदानों में वायु प्रदूषण की गम्भीर समस्या पैदा हो जाती है। एक अनुमान के मुताबिक हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और राजस्थान में हर साल धान की फसल के 3.9 करोड़ टन अवशेष जलाये जाते हैं। **सिंधु-गंगा के मैदान (आईजीपी) के बिल्कुल पूर्वी हिस्से में स्थित पश्चिम बंगाल का इस समस्या में कोई खास योगदान नहीं होने के बावजूद वह इसके दुष्परिणामों का सामना करने को मजबूर होता है।**

- पंजाब सरकार ने यह जानते हुए कि जलस्तर कम हो रहा है, भूजल के अधिक दोहन को कम करने के लिए एक व्यावहारिक नीति प्रतिक्रिया के तहत व्यवस्था की कि अप्रैल-मई में उगाई जाने वाली कम अवधि की 'साथी' फसल को खत्म कर दिया जाए और धान की बोवाई देर से की जाए। पानी को बचाने की फौरी जरूरत को देखते हुए पंजाब और हरियाणा ने भूजल संरक्षण के लिए मॉनसून की शुरुआत से पहले धान की रोपाई पर पाबंदी लगाने के लिए वर्ष 2009 में उप भूमि जल संरक्षण अधिनियम और हरियाणा उप जल संरक्षण अधिनियम लागू किया था। इन नीतियों की वजह से धान की रोपाई की तारीख को 1 जून से बढ़ाकर 20 जून कर दिया गया (राज्य में कांग्रेस की सरकार बनने के बाद इसे घटाकर 13 जून किया गया)। मोटे तौर पर करीब एक पखवाड़े की देरी से धान की रोपाई किए जाने से पंजाब ने 2000 अरब लीटर पानी बचा लिया। धान की रोपाई को करीब एक पखवाड़े तक आगे बढ़ाने से फसल तैयार होने में तो देर होती ही है साथ ही साथ पराली जलाने की अवधि भी लगभग वही हो जाती है जब दिल्ली और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) में हवा की रफ्तार मद्धिम होती है।

- इस बीच, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान-कानपुर (आईआईटी-के) की अगुवाई में सेटेलाइट डेटा का इस्तेमाल करते हुए कराए गए एक अध्ययन से यह जाहिर होता है कि वर्ष 2016 में मॉनसून सत्र के बाद पराली जलाने की अवधि को लगभग 10 दिन आगे बढ़ा देने से वायु की गुणवत्ता बदतर होने में एक छोटा सा योगदान हुआ (दिल्ली में 3%)। हालांकि अगर पराली जलाने में अगर और भी ज्यादा देर की जाए तो इसे जलाने के स्थान - जैसे कि लुधियाना और दिल्ली में हवा की गुणवत्ता और भी ज्यादा खराब हो जाएगी। इससे लुधियाना और दिल्ली में हवा की गुणवत्ता में क्रमशः 30% और 4.4% गिरावट आएगी। बाकी सालों के लिए सिमुलेशंस समय परिवर्तन के प्रभावों में मजबूत अंतरवार्षिक परिवर्तनशीलता को जाहिर करते हैं, जिसमें पीएम 2.5 संकेंद्रण की तीव्रता और यहां तक कि उसकी दिशा में होने वाले बदलाव भी मौसम संबंधी विशिष्ट स्थितियों पर निर्भर करते हैं, लिहाजा मानसून के बाद सिंधु-गंगा के मैदानों (आईजीपी) में वायु की गुणवत्ता, मौसम विज्ञान और उत्तर-पश्चिमी भारत के खेतों मे जलाई जाने वाली पराली की मात्रा, पराली को जलाने के समय में किए गए चिह्नित बदलाव की तुलना में ज्यादा संवेदनशील है। पश्चिम बंगाल भी उस वायु प्रदूषण से काफी हद तक प्रभावित होता है जो इस अवधि में आईजीपी के पूर्वी हिस्सों की तरफ बढ़ता है।

- आईआईटी दिल्ली द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार पराली जलाया जाना पश्चिम बंगाल में आग लगने की घटनाओं का एक प्रमुख कारण है :

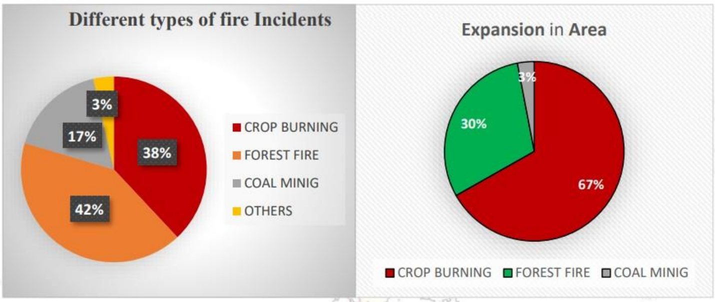

Fig. 3.12: (a) *Percentage distribution of Open Biomass Burning. (b) Area share of total Biomass Burning.*

पराली मुख्य रूप से दिसंबर के महीने में पूर्व बर्धमान, पश्चिम मेदिनीपुर, झारग्राम, बांकुरा, बीरभूम और हुगली जिलों के धान के खेतों में उत्पन्न होती है। मार्च-अप्रैल के महीनों में मुर्शिदाबाद, दक्षिण दिनाजपुर, उत्तर दिनाजपुर, मालदा और नादिया में पराली जलाने का काम होता है।

आईआईटी कानपुर द्वारा यूनिवर्सिटी ऑफ लीसेस्टर, किंग्स कॉलेज लंदन, पंजाब विश्वविद्यालय और पीजीआईएमईआर चंडीगढ़ के सहयोग से किए गए अध्ययन से यह जाहिर होता है कि पिछले लगभग दो दशकों के दौरान पराली की मात्रा और उसे जलाने का क्षेत्र उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है जिसका अक्स फसल उत्पादन में बढ़ोत्तरी के सरकार के आंकड़ों में नजर आता है। हालांकि वर्ष 2009 में भूजल नीति लागू किए जाने के बाद पराली जलाने की अवधि आगे बढ़ाई गई है, जिसका भूजल स्तर पर वांछित सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। मानसून के बाद की वातावरणीय गतिशीलता से बहुत अधिक प्रभावित साल-दर-साल अतिरिक्त परिवर्तनशीलता के साथ जलाई जाने वाली पराली की बढ़ती मात्रा जिम्मेदार है। यह परिणाम मौसम संबंधी वातायन (वेंटिलेशन) में गिरावट को जाहिर करते हैं जो प्रदूषणकारी तत्वों को सतह के पास ठहरा देते हैं और बढ़ी हुई मात्रा में पराली जलाए जाने से उत्पन्न प्रदूषणकारी तत्वों के साथ मिलकर यह सिंधु-गंगा के संपूर्ण मैदान में पीएम2.5 को फैलाव दे सकते हैं।

पराली जलाने की समस्या के समाधान के लिए उठाए गए नीतिगत कदम

कृषि मंत्रालय ने वर्ष 2014 में राष्ट्रीय कृषि अवशेष प्रबंधन नीति विकसित की, ताकि पराली जलाने की प्रथा को रोका जाए और इसे सभी राज्य सरकारों तथा केंद्र शासित प्रदेशों में प्रसारित किया जाए। इस नीति के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं : (1) कृषि अवशेषों के अनुकूलतम उपयोग और स्थानिक प्रबंधन की प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देना, (2) कृषि पद्धतियों के लिए समुचित तंत्र को बढ़ावा देना, (3) राष्ट्रीय दूर संवेदी एजेंसी और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के साथ मिलकर पराली प्रबंधन की निगरानी के लिए सेटेलाइट आधारित प्रौद्योगिकियों का इस्तेमाल और (4) बहु-अनुशासनिक दृष्टिकोण के जरिए वित्तीय सहयोग उपलब्ध कराना और नवोन्मेषी विचारों और परियोजना प्रस्तावों के लिए विभिन्न मंत्रालयों से वित्तीय सहायता लेना ताकि उपरोक्त कार्य पूरे किए जा सकें।

- मार्च 2018 के दौरान आर्थिक मामलों से जुड़ी मंत्रिमंडलीय समिति ने पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में पराली के स्थानिक प्रबंधन के लिए कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से केंद्रीय सेक्टर योजना (सीएसएस) के तहत 1151.80 करोड़ रुपए की मंजूरी दी थी ताकि वायु प्रदूषण को नियंत्रित किया जाए और कृषि संबंधी यंत्रों पर सब्सिडी दी जा सके। बताया जाता है कि इसके परिणामस्वरूप जनवरी 2020 तक पंजाब में 16000 हैप्पी सीडर्स का इस्तेमाल किया जा रहा था।

- हालांकि काउंसिल ऑन एनर्जी एनवायरनमेंट एंड वाटर (सीईईडब्ल्यू) के अनुमान के मुताबिक तकरीबन 5.863 मिलियन एकड़ उस जमीन को कवर करने के लिए 35000 हैप्पी सीडर्स की जरूरत होगी जिन पर हर साल

पराली जलाई जाती है। हालांकि वर्ष 2018 में इस मशीन का उत्पादन उसकी मांग के मुकाबले काफी कम था। इस मशीन के किराए की कोई मानक दर नहीं थी और ऐसी प्रौद्योगिकियों की किराए संबंधी लागत चुकाना भी कुछ किसानों की क्षमता से बाहर था। विशेषज्ञों ने यह भी दलील दी कि किसानों को पराली प्रबंधन की ऐसी मशीनों पर इतनी भारी रकम खर्च करना ठीक नहीं लगता था क्योंकि उनका इस्तेमाल साल में कुछ ही दिन होता है और वर्ष के बाकी दिनों में वह बेकार खड़ी रहती हैं।

- हालांकि वर्ष 2019 में राजनीतिक हलके में इस बात को माना गया कि सिर्फ प्रौद्योगिकी से जुड़े उपायों तक ही सीमित रहना फायदेमंद नहीं है। इसके बजाय पंजाब और हरियाणा की सरकारों ने किसानों को पराली नहीं जलाने और उसका वैकल्पिक इस्तेमाल करने के लिए प्रति एकड़ 2500 रुपए की प्रोत्साहन राशि देने की नीति अपनायी। बदकिस्मती से यह घोषणा नवंबर के आखिरी हफ्ते में की गई जब ज्यादातर पराली पहले ही जलाई जा चुकी थी। इस नीति को इस साल पूरी तरह खत्म कर दिया गया, जब यह पता चला कि अनेक ग्राम पंचायतों ने इस धनराशि का गलत इस्तेमाल किया है।

- पश्चिम बंगाल सरकार ने मार्च 2019 में वायु प्रदूषण से निपटने की कोशिश के तहत पूरे राज्य में खेतों में धान की फसल के अवशेषों को जलाने पर पूरी तरह पाबंदी लगा दी। इसका उल्लंघन करने वालों के खिलाफ वायु प्रदूषण नियंत्रण एवं रोकथाम अधिनियम 1981 के तहत कार्रवाई का प्रावधान किया गया जिसमें उल्लंघनकारी को जेल भेजे जाने तक की व्यवस्था है। वर्ष 2020 के बाद से पश्चिम बंगाल में हर साल 4 नवंबर को पराली दहन रोधी दिवस मनाया जाता है।

- वर्ष 2020 में हरियाणा सरकार ने 'मेरा पानी-मेरी विरासत' योजना शुरू की। इसके तहत किसानों को सात हजार रुपये प्रति एकड़ के हिसाब से धन दिए जाने का प्रावधान है, अगर वे खरीफ सत्र में धान उगाने के लिए अपनी 50% से ज्यादा कृषि भूमि का विविधीकरण करते हैं। जहां इस योजना का उद्देश्य पानी की बचत करना है, वहीं विशेषज्ञों ने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि चावल से फसल विविधीकरण किए जाने से सिंधु-गंगा के मैदान में पराली की समस्या को खत्म करने में मदद मिलेगी।

- मई 2021 में बिजली मंत्रालय ने खेत में पराली जलाने से होने वाले वायु प्रदूषण की समस्या से निपटने और थर्मल पावर उत्पादन के कार्बन फुटप्रिंट को कम करने के लिए कोयले से चलने वाले थर्मल प्लांट में बायोमास उपयोग के लिए एक राष्ट्रीय मिशन शुरू किया। इस प्रस्तावित राष्ट्रीय मिशन की अवधि न्यूनतम पांच साल है। इस मिशन के तहत बायोमास पैलेट और कृषि अवशेषों की आपूर्ति श्रृंखला और बिजली संयंत्रों तक इन्हें ले जाने के मसलों का समाधान किया जाएगा।

नीति विशेषज्ञों द्वारा बार-बार सुझाए जा रहे दीर्घकालिक समाधान

- विशेषज्ञों ने खेती की तर्ज में विविधता लाने और ज्यादा पानी की खपत वाली धान की फसल को छोड़कर मक्का सहित दूसरी फसलें उगाने की जरूरत पर जोर दिया है। पंजाब ने धान के स्थान पर सूरजमुखी और मक्का की खेती को आगे बढ़ाया लेकिन आधे-अधूरे मन से। नतीजतन वे प्रयोग नाकाम रहे। द एनर्जी रिसोर्सेस इंस्टीट्यूट (टेरी) ने अपने एक दस्तावेज में कहा है कि चावल-गेहूं फसल प्रणाली के बजाय किसानों को अन्य फसल चक्र के लिए प्रोत्साहित करके सिंधु-गंगा के मैदानी क्षेत्र में फसल चक्र का फिर से मूल्यांकन करने की जरूरत है।

- सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च की एक रिपोर्ट में दावा किया गया है कि पंजाब और हरियाणा में भूजल संकट के चलते कृषि विविधीकरण की दिशा में प्रयास किए जा रहे हैं। दरअसल पंजाब के मुख्यमंत्री ने कहा है कि राज्य में धान की फसल का कोई भविष्य नहीं है। ऐसा लगता है कि कृषि का यह विविधीकरण कोविड-19 महामारी के कारण उत्पन्न हुई अव्यवस्थाओं से और तेज हुआ है। जून-जुलाई में लागू लॉकडाउन के कारण धान की बोवाई के लिए बिहार और उत्तर प्रदेश के प्रवासी मजदूरों के उपलब्ध नहीं होने के चलते मक्का और कपास जैसी वैकल्पिक फसलों के उत्पादन के लिए खेती के रकबे में और भी बढ़ोत्तरी हुई। मुख्य बात इस रूपांतरण को बनाए रखने में निहित है। इससे यह सुनिश्चित होगा कि फसल को ऐसा बाजार मिलेगा जहां वाजिब दाम हासिल हों।

- टेरी द्वारा जारी एक अन्य दस्तावेज 'अ फिसकली रिस्पांसिबल ग्रीन स्टिमुलस' में पराली का इस्तेमाल बिजली घरों में किए जाने का सुझाव दिया गया है। इससे कृषि अवशेष एक ऐसा सामान बन जाते हैं जिनका अपना एक दाम है और इससे किसानों को आर्थिक मुनाफा होने के साथ-साथ खेतों में पराली जलाए जाने का सिलसिला खत्म हो जाएगा। उच्चतम न्यायालय ने भी पिछले साल वायु प्रदूषण के संकट से जुड़े एक मामले की सुनवाई के दौरान यह सुझाव दिया था। फसल के कचरे का इस्तेमाल पराली को ब्रिकेट्स का रूप देकर उनके मूल्यवर्धन के लिए किया जा सकता है। इन पैलेट्स का इस्तेमाल औद्योगिक बॉयलर्स में ऊष्मा उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है। इनका उपयोग बिजली घरों में विद्युत उत्पादन के लिए कोयले के साथ मिलाकर भी किया जा सकता है। नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन (एनटीपीसी) ने जाहिर किया है कि 10% तक फसल अपशिष्ट ब्रिकेट को कोयले के साथ सफलतापूर्वक मिलाया जा सकता है। खुली निविदाओं के जरिए पैलेट की खरीद करने वाली एनटीपीसी ने यह भी पाया कि पैलेट्स की लागत उनके द्वारा उपयोग किए जा रहे कोयले के कैलोरीफिक मान के समान थी, लिहाजा जब कोयले को कृषि अवशेषों से बनाए गए पैलेट को 10% कोयले के स्थान पर इस्तेमाल किया गया तो उनकी ऊर्जा उत्पादन लागत में बढ़ोत्तरी नहीं हुई।

- तीसरा विकल्प बार-बार समझाया जाता है कि पराली का ऐसी औद्योगिक गतिविधियों में विकेंद्रित इस्तेमाल किया जाए, जहां कोयले का काफी प्रयोग किया जाता है जैसे कि ईंट-भट्ठा। भारत में ईट भट्ठे दूसरे सबसे बड़े कोयला खपत वाले उपभोक्ता हैं और हर साल इनमें 62 मिलियन टन कोयला इस्तेमाल किया जाता है क्योंकि ज्यादातर ईट भट्ठे ऐसे इलाकों में स्थित होते हैं जहां कृषि अवशेषों को जलाने का सिलसिला सबसे ज्यादा होता है। ऐसे में अगर कोयले के विकल्प के तौर पर बायोमास ब्रिकेट का इस्तेमाल किया जाए तो इससे बड़ी मात्रा में पराली का इस्तेमाल हो सकता है। असम, बिहार, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में देश के कुल एक उत्पादन का 65% हिस्सा तैयार किया जाता है।

- पराली को बिजली उत्पादन, कृषि प्रसंस्करण और ग्रामीण स्तर पर विकेंद्रित कोल्ड स्टोरेज के संचालन में बायोमास गैसीफायर चलाने के लिए ईंधन के तौर पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे किसानों को औद्यानिकी फसलों को अपनाने का विकल्प मिलेगा, जिसके लिए मौजूदा वक्त में किसान मानसिक रूप से पूरी तरह तैयार नहीं होते हैं क्योंकि उन्हें स्थानीय स्तर पर कोल्ड स्टोरेज क्षमता बहुत सीमित मात्रा में ही मिल पाती है। हालांकि बायोमास पावर प्लांट का बाजार इस वक्त बिखरा हुआ है, लेकिन पंजाब में हर साल बायोमास पावर प्लांट में 10 लाख मैट्रिक टन धान का भूसा इस्तेमाल किया जाता है। हालांकि यह हर साल पैदा होने वाली एक करोड़ 97 लाख मैट्रिक टन पराली के हिसाब से बहुत कम है।

धान की पुआल के निस्तारण के अन्य विकल्पों में कागज या गत्ते के कारखानों में इनका उपयोग किया जाना शामिल है।

पीजीआईएमईआर चंडीगढ़ के डॉक्टर रविंद्र अग्रवाल ने कहा कि पराली जलाने से उत्पन्न होने वाले वायु प्रदूषण का असर सबसे पहले किसानों और उनके परिवारों पर पड़ता है और उनकी फसल तथा मवेशी प्रभावित होते हैं। यही वजह है कि किसान भी पराली के समाधान का एक हिस्सा बनने के लिए तत्पर हैं। हालांकि इस समाधान के लिए एक समग्र रवैया अपनाना होगा जिसमें जमीन पर एक सुव्यवस्थित क्रियान्वयन के साथ अल्पकालिक और दीर्घकालिक योजना बनाई गई हो।

उन्होंने कहा कि पंजाब सरकार ने वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग (सीएक्यूएम) को दिए गए एक प्रस्ताव में कहा था कि किसानों को पराली जलाने से रोकने के लिए ढाई हजार रुपए प्रति एकड़ के हिसाब से धनराशि दी जानी चाहिए। इस पर 1875 करोड़ रुपए की कुल धनराशि खर्च होने का अनुमान है। इस प्रस्ताव के तहत दिल्ली और पंजाब सरकार 500-500 रुपए का योगदान करेंगी वही इन दोनों सरकारों ने केंद्र से 1500 रुपए का योगदान करने का अनुरोध किया है। हालांकि हर साल पराली नहीं जलाने की प्रतिपूर्ति का भुगतान करना व्यवहारिक नहीं होगा। उनका मानना है कि प्रोत्साहन को कृषि विविधीकरण के लिए दिया जाना चाहिए जो अधिक सतत होने के साथ-साथ खाद्य सुरक्षा से पोषण सुरक्षा की तरफ बढ़ने की दिशा में एक कदम होगा। इससे पर्यावरण के लिहाज से सतत फसलों के उत्पादन को मजबूती मिलेगी, लिहाजा किसानों को आर्थिक रूप से व्यावहारिक विकल्पों को अपनाने के प्रति शिक्षित किया जाना चाहिए।

कृषि अवशेषों के सतत इस्तेमाल से ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर आधारित स्टार्टअप को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ऐसे स्टार्टअप से लोगों को रोजगार मिलता है। हमें कृषि अवशेषों से जैव ऊर्जा के उत्पादन में निवेश करने की जरूरत है। इसके अलावा हमें वाणिज्यिक इस्तेमाल के नए अवसर तलाशने की भी जरूरत है, जैसे कि यीस्ट प्रोटीन निकालना।

डॉक्टर खैवाल ने स्वच्छ उत्सर्जन की रणनीतियों पर आधारित अपने अध्ययन में यह आग्रह किया है कि पराली को पशुओं के चारे, कंपोस्ट, मवेशी बाड़े का फर्श बनाने और कृषि भूमि को तैयार करने की सामग्री के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। उन्होंने एक ऐसा मॉडल पेश किया है जो पर्यावरण के प्रति अनुकूल तरीके से कृषि अवशेषों के प्रबंधन के लिए पराली के प्रकार, भौगोलिक स्थिति, मौसम और संसाधन उपलब्धता के आधार पर वैकल्पिक समाधानों पर केंद्रित है। उनका हालिया अध्ययन फसल अवशेष को जलाने में कमी लाने के लिए सात सूत्री एजेंडा प्रस्तुत करता है। भारत में सिर्फ कुछ फसलों का ही एक निश्चित न्यूनतम बिक्री मूल्य तय होता है। यह प्रावधान किसानों को उन विशिष्ट फसलों के उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करते हैं जिसके परिणामस्वरूप उन फसलों से भारी मात्रा में पराली निकलती है।

डॉक्टर खैवाल ने इस बात पर भी रोशनी डाली है कि किसानों को मशीन निर्माताओं और/अथवा मशीनरी के बजाय समग्र लाभ दिया जाना चाहिए और फसल उत्पादन पर ध्यान देना चाहिए क्योंकि मशीनें सिर्फ कुछ हफ्तों तक के लिए ही इस्तेमाल होती हैं और उन्हें खरीदने के लिए काफी पैसा खर्च करना पड़ता है। स्थाई कृषि अवशेष प्रबंधन के लिए समुदाय आधारित समाधानों की जरूरत है क्योंकि छोटे किसानों और लोगों के पास स्थाई समाधान विकसित करने के लिए कम संसाधन मौजूद हैं। ग्रामीण कृषि के साथ महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून (मनरेगा) को एकीकृत करके समुदाय आधारित समाधान हासिल किए जा सकते हैं और आशा कार्यकर्ताओं की ही तरह श्रमशक्ति को स्थाई कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने के लिए खोजा जा सकता है। इसमें पराली का प्रबंधन भी शामिल है। खेत से बाजार तक लागत-लाभ विश्लेषण, साथ ही साथ पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी विचार कृषि उत्पादन के लिए सरकारी नीति और प्रोत्साहन कार्यक्रमों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

रवींद्र, के., सिंह, टी. और मोर, एस., 2019। भारत में प्राथमिक फसल अवशेषों को जलाने से वायु प्रदूषकों का उत्सर्जन और स्वच्छ उत्सर्जन के लिए उनकी शमन रणनीतियाँ। जर्नल ऑफ़ क्लीनर प्रोडक्शन, 208, पीपी.261-273।

रवींद्र, के., सिंह, टी. और मोर, एस., 2022. COVID-19 महामारी और भारत में फसल अवशेष जलने में अचानक वृद्धि: स्थायी फसल अवशेष प्रबंधन के लिए मुद्दे और संभावनाएं। पर्यावरण विज्ञान और प्रदूषण अनुसंधान, 29(2), पीपी.3155-3161.